Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies,
Online ISSN 2278-8808, SJIF 2016 = 6.17, www.srjis.com
UGC Approved Sr. No.49366, MAR–APR, 2018, VOL- 5/44

सामाजिक लोकतन्त्र पर अम्बेडकर का दृष्टिकोण

मनीष कुमार

असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, स्वामी श्रद्धानंद कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

E-mail-manish107msh@yahoo.co.in

Abstract

सामाजिक न्याय की बात करने वाले दलितों के मसीहा और भारतीय संविधान के जनक डॉ बी. आर. अंबेडकर ने भारतीय लोकतंत्र में उद्दार दृष्टिकोण अपनाया और मूल्य आधारित लोकतंत्र का समर्थन किया और उनकी विचारधारा स्वतन्त्रता, समानता और एकता के इर्द गिर्द घूमती है। इस लेख का भी यही उद्देश्य अंबेडकर के लोकतान्त्रिक विचारधारा का, विषेशरूप से सामाजिक लोकतंत्र, विश्लेषण और मूल्यांकन करना है। लोकतान्त्रिक प्रक्रिया में भाग लेकर सामाजिक रूप से पिछड़े और दबे कुचले वर्ग का उद्धार संभव है, यदि समानता आधारिक समाज का निर्माण किया जाये जिसमें सबके विकास करने के लिए स्वतंत्र वातावरण तैयार हो सकता है और लोगों में एकता का भी भाव पैदा होगा। लेकिन, समस्या यह है कि जातिवाद, तुष्टीकरण, धार्मिक समीकरण, श्रेणीबद्ध वर्ण व्यवस्था रूढ़िवादी समाज के सकारात्मक परिवर्तन, दलितों के उद्धार, उनके संगठित होने, सामाजिक रूप से एकजुट होकर रहने और विकास के रास्ते में एक बहुत बड़ी बाधा है।

Keywords: *सामाजिक लोकतंत्र, भारतीय संविधान, विश्लेषण, लोकतान्त्रिक प्रक्रिया, समानता, जातिवाद, वर्ण-व्यवस्था, स्वतन्त्रता*

Scholarly Research Journal's is licensed Based on a work at www.srjis.com

भूमिका

अम्बेडकर भारत में जन्में सामाजिक न्याय दिलाने वाले और दबे कुचले लोगों के हितैषियों में से एक थे। वह निस्संदेह विश्व के सबसे बड़े संविधान के मुख्य वास्तुकार और मसौदा समिति के अध्यक्ष थे। लेकिन इस संविधान में उनकी उपस्थिति का केवल एक ही लक्ष्य था कि उच्च सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्य हासिल किया जा सके। लाखों दलितों की मुक्ति उनका लक्ष्य था, और समाज के अंदर जाति के जहर को मिटाना भी उनका सपना था। अंबेडकर चाहते थे कि जाति से संबन्धित संघर्ष मिटना चाहिए , जिसके संदर्भ में भारत में ब्रिटिश शक्ति को जड़ से उखाड़ने के लिए भारत में बन रहे विदेशी शासन के खिलाफ माहौल को समझना ज़रूरी था। जाति व्यवस्था पर उनका आंकलन उनके द्वारा पूर्व-औपनिवेशिक ब्राह्मणवाद की आलोचना पर आधारित था, जिसने शोषण की प्रक्रिया को सुविधाजनक बनाने और अस्पृश्यता की मानव प्रणाली में सबसे अधिक अस्तित्व में लाने के लिए पदानुक्रमित जाति व्यवस्था को सरलीकृत किया। इसलिए उपनिवेशवाद विरोधी उनके कार्यों को जाति के उन्मूलन के कार्यक्रम के साथ जोड़ा गया था। जाति-विरोधी और ब्रिटिश शासन के खिलाफ संघर्षों के दौरान, उन्होंने महसूस किया कि जाति को ख़त्म करने का हिंदू धर्म की आलोचना से गहरा संबंध है।

यदि हम छुआछूत को मिटाने के उद्देश्य से बाबा साहब अंबेडकर के दार्शनिक दृष्टिकोण को देखने की कोशिश करते हैं, तो हम देखते हैं कि उन्होंने महाड के पानी का मुद्दा, मंदिर में प्रवेश, दलित और ब्राह्मणवादी वर्चस्ववादी

Copyright © 2018, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

सिद्धांत पर हमला करने के लिए प्रयास किए और इसी के साथ ही समाज में फैली विषमता को खत्म करने के उद्देश्य से दलित जनता को झकझोरा।

लोकतन्त्र पर अंबेडकर के विचार

सामाजिक न्याय की बात करने वाले अंबेडकर शायद इकलौते व्यक्ति थे, और यकीनन 20वीं सदी में एकमात्र भारतीय थे, जिन्होंने कट्टरपंथी लोकतंत्र का एक सिद्धांत पेश किया, एक ऐसा सिद्धांत जो 21वीं सदी में हमारा मार्गदर्शन कर सकता है। हमें यह याद रखने की बहुत आवश्यकता है कि उनकी बौद्धिक और राजनीतिक विरासत जाति-आधारित अन्याय की उनके द्वारा की गई आलोचना पर केंद्रित है।

अम्बेडकर लोकतंत्र पर चिंतन करने वाले पहले भारतीय विचारक नहीं थे। लेकिन वह तीन बुनियादी सवालों के मूल जवाब देने वाले पहले व्यक्ति थे जिन्होंने सामाजिक न्याय को लोकतन्त्र के साथ अभिन्न रूप से जोड़ा। एक, इस तरह का एक विचार निर्मित चाहिए, जो मार्गदर्शन निर्धारित करता हो, और यह तय करने की ज़िम्मेदारी उठाए और जनता की आवश्यकताओं को कैसे पूरा किया जाये, यह भी स्पष्ट करे। दूसरा, स्वस्थ राजनीति करते हुए वर्तमान स्थिति का मूल्यांकन करना चाहिए और ऐसी परिस्थिति बनानी चाहिए जिससे आलोचना का माहौल बन सके। तीसरा, इसे एक लोकतांत्रिक आदर्श का मार्ग बनाना चाहिए, ताकि हम बात कर सकें कि हम कहाँ खड़े हैं, कहाँ हमारा लक्ष्य क्या हो। अम्बेडकर की प्रतिक्रिया विशुद्ध रूप से बिलकुल नए थे, किसी और के विचारों से प्रेरित नहीं थे। उनके ये विचार भारत के साथ अभिन्न रूप से जुड़े हुए थे।

डॉ अम्बेडकर ने जो विचार प्रस्तुत किए वे सोचने के स्तर पर दो तरह से आश्चर्यजनक रूप से भिन्न थे जो उनके समय में हावी थे। एक तरफ जवाहरलाल नेहरू जैसे 'उदारवादी' थे, जो उम्मीद करते थे कि भारत में लोकतंत्र की पश्चिम की कहानी को फिर से चलाया जाएगा, भले ही वह समय अंतराल के साथ हो। उनके लिए, पश्चिमी लोकतंत्र वह मॉडल थे, जिसकी ओर भारत ने संविधान बनाकर और वहाँ की लोकतंत्रीय विचार को अपनाकर अपनी यात्रा शुरू की थी। दूसरी ओर आलोचक थे, जिनमें से ज्यादातर वामपंथी थे, जिन्होंने सोचा था कि यहाँ जनता का शासन का प्रयोग सफल नहीं होगा, जनता के शासन के विचारों की मर्यादा में लिपटे पूंजीपति वर्ग के शासन के अलावा और कुछ नहीं।

सामाजिक लोकतन्त्र पर अंबेडकर के विचार

अलग अलग चिंतकों, सामाजिक विचारकों और लेखकों ने लोकतंत्र की कई परिभाषाएँ दी हैं। मानवाधिकारों के अथक समर्थक और लोकतंत्र में दृढ़ विश्वास रखने वाले, डॉ अम्बेडकर कहते हैं: "जनता की भावना सिर्फ सरकार की ज़िम्मेदारी ही नहीं है,यह समाज द्वारा बनाया गया संगठन का एक प्रतीक भी है।"लोकतंत्र में लोगों के जीवन के हर पहलू में बदलाव बिना किसी खूनी क्रांति या संघर्ष के भी किए जा सकते हैं,इस बात पर अंबेडकर का बहुत विश्वास था। इसके लिए शर्तें इस प्रकार हैं: "(1) समाज में स्पष्ट असमानताएं नहीं होनी चाहिए, यानी एक वर्ग के लिए विशेषाधिकार; (2) असहमति का होना; (3) न्याय व्यवस्था की एकरूपता; (4) संवैधानिक नैतिकता का

Copyright © 2018, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

पालन; (5) बहुमत का कोई अत्याचार नहीं; (6) समाज की स्वाभाविक व सभ्य व्यवस्था: और (7) सब लोगों की एक जैसी बोधगम्यता"

अंबेडकर ने जनता के विश्वास को संविधान में श्रद्धापूर्वक जोड़ने के उद्देश से बहुत ज़रूरी बिन्दुओं पर ध्यान देने की ज़रूरत महसूस की, वे हैं, "(i) संवैधानिक तरीके, (ii) बड़े लोगों के हाथों आज़ादी को गिरवी न रखना, (iii) एक ऐसे लोकतंत्र की कल्पना को साकार करना जो समाज के सभी वर्गों को एक साथ लेकर आगे बढ़ सके।"

अंबेडकर इस बात के पुरजोर समर्थक थे कि केवल ऐसा ही समाज विकसित हो सकता है जो सामाजिक और आर्थिक रूप से समान होगा, अन्यथा हम सफल लोकतंत्र की कल्पना नहीं कर सकते हैं। वे इसे एक शक्तिशाली हथियार के रूप में देखते थे कि आर्थिक और सामाजिक उन्नति के लक्ष्य को केवल लोकतंत्र द्वारा ही पा सकते हैं। केवल लोकतंत्र के दायरे में रहते हुए ही राज्य समाजवाद तानाशाही को हरा सकता है। आर्थिक सुरक्षा के बिना मौलिक अधिकार गरीबों के लिए किसी काम के नहीं हैं।

भारत जैसे बहु-सांप्रदायिक समाज में, जहां हर जगह धर्मनिरपेक्षता है, और उन स्तंभों में से एक है, जिस पर हमारे लोकतंत्र की आधारशीला टिकी हुई है। यह हमारे साझा जीवन को एक करने की शक्ति है।

अंबेडकर स्पष्ट करते हैं कि: " एक ऐसे राज्य की कल्पना करना जिसमें सभी धर्मों को समान दर्जा दिया जा सकता है, यह विचार पश्चिम की उदार लोकतांत्रिक परंपरा से ली गई है। कोई भी संस्था जो पूरी तरह से राज्य के धन से संचालित होती है, धार्मिक शिक्षा से जुड़े हितों से संबन्धित कार्य नहीं किए जाएँगे, भले ही धर्म से जुड़े अनुदेशों का पालन राज्य के या किसी और संस्था द्वारा करवाया गया हो।"

अंबेडकर इस ओर ध्यान दिलाना चाहते हैं कि धर्मनिरपेक्ष होना धर्म के खिलाफ होना नहीं होता या ये देश की धार्मिक मर्यादाओं का उल्लंघन करना नहीं है, इसका उद्देश्य यह भी नहीं है कि जनमानस धार्मिक मान्यताओं को ध्यान में नहीं रखा जाएगा। धर्मनिरपेक्षता का केवल यह अर्थ होगा कि किसी भी रूप से ये देश किसी को कोई भी धर्म अपनाने या छोडने के लिए किसी पर दबाव नहीं बना पाएगा।"

सामाजिक एकता को बल का प्रयोग आदि तरीकों से हासिल किया जा सकता है। सच्चे लोकतंत्र के फलने-फूलने और आगे बढ़ने के लिए सामाजिक एकता जरूरी है। वे अलसंख्यकों के हितों को बहुत अधिक महत्व देते हैं। जनता के शासन की एक खूबसूरत बात ये है कि इसमें बड़ी संख्या छोटी संख्या को परेशान नहीं करती है। संख्यात्मक दृष्टि से बड़ी संख्या वाले धार्मिक लोग कम संख्या वालों पर दबाव नहीं बनाते हैं। एक प्रभुसत्तासंपन्न राष्ट्र अपनी जनता को यह आभास कराये कि वह पूर्ण रूप से आज़ाद है किसी भी धर्म को मानने और उस पर चलने के लिए अपने विवेक का प्रयोग करने के लिए आज़ाद है, एवं राज्य उसके अधिकारों में हस्तक्षेप नहीं करेगा, इसके अंतर्गत एक निश्चित सीमा तक अपनी संस्कृति, सभ्यता और शिक्षा का विस्तार करने के लिए एक नागरिक को पूर्ण स्वतन्त्रता होगी।"

डॉ अम्बेडकर ने नैतिक शब्द पर बहुत जोर दिया और कहा: "स्वतंत्रता की घोषणा यह नहीं कहती है कि सभी पुरुष समान हैं; यह घोषणा करता है कि वे समान बनाए गए हैं।" उन्होंने आगे तर्क दिया कि, "समाज में स्पष्ट

Copyright © 2018, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

असमानताएं नहीं होनी चाहिए। कोई उत्पीड़ित वर्ग नहीं होना चाहिए। कोई दमित वर्ग नहीं होना चाहिए।" सबको एक समान अधिकार मिलेगा यह एक भ्रामक शब्द है। समानता के लिए अवसर का होना एक अनिवार्य शर्त है। 26 जनवरी की वो ऐतिहासिक घड़ी जब भारत का संविधान देश पर लागू होनेवाला था तभी डॉ अम्बेडकर ने चेतावनी दे दी थी, कि देश उस तरफ जा रहा है जहां से आपसी तालमेल के साथ साथ ही वैचारिक विरोध भी बढ़ेगा। हो सकता है कि समानता का सिद्धान्त केवल सिद्धान्त बनकर ही रह सकते हैं। आम जन जीवन पूरी तरह अलग ढंग से संविधान को देखेगा एवं इसमें हमें मतों में विभिन्नता देखने को मिलेगी। ये देश मत की शक्ति से भी परिचित होगा, जहां पर राष्ट्रपति और एक आम आदमी दोनों के ही मत का मूल्य एक जैसा होगा। लेकिन जिस तरह का हमारा समाज बना हुआ है उसमें व्यक्ति इस बात को हजम नहीं कर पा रहा है कि सभी जातियों के लोग एक साथ रहेंगे। फिर भी सवाल अब भी यही बना हुआ है कि आखिर कब तक इस तरह का मत और मतांतर बना रहेगा।

डॉ. अम्बेडकर ने मानवता के लिए काम करने का प्रण लिया था और देश का विकास करने के लिए समाज के ढांचे को जातिविहीन बनाने का प्रयास किया, साथ ही भारत के दलित और दबे हुए वर्गों की अक्षमताओं को दूर करने से संबन्धित शिक्षा को फैलाया जो एक जागरूक लोकतन्त्र का जो कि सामाजिक लोकतन्त्र की मर्यादा का पालन करता हो। सामाजिक लोकतन्त्र के संदर्भ में अंबेडकर ने मानवीय मूल्यों पर आधारित विचार का पुरजोर समर्थन किया। अंबेडकर ने वर्ण व्यवस्था का हमेशा विरोध किया है, वर्ण व्यवस्था बर्बरता के सिद्धान्त पर चलता है। एक ऐसा समाज होना चाहिए जो मनुष्यता, शिष्टाचार और सद्गुणों से भरपूर हो। उनके लिए, लोकतंत्र दलित और दबे हुए वर्गों के लिए मानवीय परिस्थितियों को स्थापित करने का एक तरीका है। वह नायक-पूजा और तानाशाही के खिलाफ थे।

अंबेडकर का सामाजिक लोकतन्त्र पर दृष्टिकोण

सामाजिक न्याय की बात करने वाले अंबेडकर हमेशा यही चाहते रहे कि भारतीय लोकतंत्र एक प्रगतिशील लोकतंत्र का उदाहरण बने, इस संदर्भ में उन्होंने बहुत अध्ययन किया और बहुत कुछ लिखा भी है, लोकतंत्र का लाभ समाज के सबसे पिछड़े वर्ग तक भी पहुंचे इसलिए उन्होंने सामाजिक लोकतंत्र के अनेक पहलुओं और उसके अर्थ को भी जानने का प्रयास किया। उन्होंने इसका अध्ययन करके पाया कि सामाजिक लोकतंत्र लोगों को जीने की कला भी सिखाया है, यह समान व्यवहार करना सिखाता है, साथ ही साथ स्वतन्त्रता और भाईचारा का भी ये संदेश देता है। इन सबको एक भी ढांचे में रखकर समझा जा सकता है। लोकतंत्र तभी सफल हो सकता है जब लोगों को समान अवसर मिले, सभी को बराबर स्वतंत्र मिले, और लोगों का भावनात्मक रूप से एक दुसरे से जुड़े रहना भी लोकतंत्रता के सफल होने की गारंटी है। इनमें से किसी को भी एक दूसरे से अलग नहीं कर सकते हैं। यदि समानता नहीं होगी तो स्वतन्त्रता व्यर्थ हो जाएगी, केवल मुट्ठी भर लोग बाकी सभी लोगों पर राज करेंगे। इससे अव्यवस्था उत्पन्न हो जाएगी और लोकतंत्रता से लोगों का विश्वास उठ जाएगा।

Copyright © 2018, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

लोकतंत्र में लोगों का विश्वास बनाए रखने के लिए एक ऐसा संविधान निर्माण करना होगा जिसमें स्वतन्त्रता, समानता और आपसी भाईचारा एक दूसरे से अलग नहीं होंगे। लेकिन भारत को इस बात को भी मानना पड़ेगा कि समाज आज भी उतना विकसित नहीं हुआ है कि इन आधुनिक विचारों को आसान से ग्रहण कर सके। जिस समाज में जाति का वर्गीकरण कर दिया गया हो वहाँ पर न्याय मिलना बहुत मुश्किल है। ऐसी परिस्थिति में सामाजिक और राजनीतिक रूप से पिछड़ों एवं दबे कुचले वर्ग को न्याय मिलने की संभावना नगण्य हो जाति है। आर्थिक रूप से कहें तो समाज में बहुत बड़ी खाई बन चुकी है अमीर और गरीब के बीच में। ऐसी स्थिति में सामाजिक लोकतंत्र को सफल बनाना एक चुनौती बन चुकी है।

पूरे लेख को पढ़ने के बाद आसानी से ही यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि अंबेडकर केवल राजनीतिक स्वतन्त्रता के ही हिमायती नहीं थे बल्कि आर्थिक रूप से एक सशक्त राष्ट्र की कल्पना करते थे। उन्होंने धर्म आदि पर जितने शोध या अध्ययन किए उससे यह स्पष्ट से प्रमाणित हो जाता है कि भारत का समाज असमानता के सिद्धान्त पर आधारित है। भारत के लोकतंत्र पर जितनी चिंतन, मनन और योगदान अंबेडकर ने किया उतना शायद ही किसी ने किया हो। इसे अंबेडकर की एक उपलब्धि ही माना जाएगा कि उन्होंने लोकतंत्र को एक नई आर्थिक दिशा दी जो सामाजिक लोकतंत्र की आधारशिला है।

संदर्भ सूची

पालीवाल, कृष्णदत्ता,दलित साहित्य- बुनियादी सरोकार, वाणी प्रकाशन, 2009
कुमार और अली,भारतीय राजनीतिक चिंतन, फॉर्मेट: ई-बुक, पीयर्सन एजुकेशन इंडिया, 2011
मिश्रा, जयकुमार,भारत का संविधान: एक पुनरदृष्टि, कल्पना पब्लिकेशन, 2010
सत्यप्रेमी, पुरुषोत्तम,दलित साहित्य- सृजन के संदर्भ, कामना प्रकाशन, 1999
जाधव, नरेंद्र,डॉ अंबेडकर, प्रभात प्रकाशन, 2015
हरित, द्रौपति,हमें जिन पर गर्व है, हरित साहित्य प्रकाशन, मिशिगन विश्वविद्यालय, 1992
बेचैन, श्योराज सिंह, हिन्दी की दलित पत्रकारिता पर पत्रकार अंबेडकर का प्रभाव, समता प्रकाशन, 1997
भारती, कंवल,मायावती और दलित आंदोलन- दलित पत्रकारिता, रमणिका पब्लिकेशन, 2004
इंडिया, पार्लियामेंट, राज्य सभा,पार्लियामेंटरी डिबेट्स, ओफिशीयल रिपोर्ट, वॉल्यूम 192, पब्लिशर- काउंसिल ऑफ स्टेट्स सेक्रेटरियट, 2001
श्रीनिवास, एम. एल.,आधुनिक भारत मेन सामाजिक परिवर्तन, राजकमल प्रकाशन, 2009
लिमये, मधु,बाबा साहब अंबेडकर- एक चिंतन, आत्माराम एंड सन्स, 1991
पेंथम, थॉमस, डच एल., केनेथ,आधुनिक भारत में राजनीतिक विचार, सेज पब्लिकेशन, 2017
पांडे, प्रीति,डॉ अंबेडकर और पंडित दीनदयाल, ई. बी. पब्लिशर्स, 2006
त्रिम्बक रानादिव, भालचन्द्र,जाति और वर्ग, नेशनल बुक सेंटर, 2009
अपेक्षा,दलित साहित्य और संस्कृति की संवाहक, वॉल्यूम 3, दलित साहित्य प्रकाशन संस्था, 2004

Copyright © 2018, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies